समान नागरिक संहिता और लैंगिक न्याय

डॉ पिंकी पुनिया एवम डॉ ऋतेष भारद्वाज

सार

आज भारत में महिलाओं के अधिकारों से संबंधित शायद ही कोई दूसरा मुद्दा इतने दबावों का शिकार रहा होगा जितना कि विभिन्न धार्मिक समुदायों में व्याप्त निजी कानूनों में सुधार का मुद्दा। समाज का पितृसत्तात्मक आधार ही निजी कानूनों को जीवित रखने का सबसे महत्वपूर्ण कारण रहा है क्योंकि पूरे मामलों को धार्मिक मान्यता के साथ उलझा देने के बाद इस सवाल पर खुली बहस के दौरान हमें कई चुनौतियां देखने को मिलती है। प्रस्तुत लेख में समान नागरिक संहिता और लैंगिक न्याय के मध्य मौजूदा बहस एवं अन्य विकल्पों के साथ.साथ इस विषय पर वर्तमान स्थिति का भी विश्लेषण भी किया गया है। प्रस्तुत लेख में समान नागरिक संहिता का अध्ययन एवं विश्लेषण लैंगिक न्याय के संदर्भ में किया गया है।

भारतीय नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता का प्रावधान है लेकिन उत्तराधिकारए विवाहए तलाक और बच्चों के संरक्षण वह गोद लेने के मामलों में विभिन्न धर्मों पर आधारित अलग.अलग कानून आज भी मौजूद है। इन निजी कानूनों के माध्यम से महिलाओं के साथ उन सभी मामलों में भेदभाव होता है जिसका जिक्र संविधान के मूल अधिकारों वाले अध्याय, भाग 3 में किया गया है। संविधान राज्यों से यह आग्रह करता है ;अनुच्छेद 44 नीति निर्देशक तत्वद्ध कि वह समान नागरिक संहिता बनाने की कोशिश करें

ताकि निजी कानूनों की पृष्ठभूमि में मौजूद असमानता, शोषण, मौलिक अधिकारों के उल्लंघन को रोका जा सके। स्वतंत्रता के इतने वर्षों के पश्चात भी जनसंख्या का एक बड़ा वर्ग अपने मूलभूत अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहा है। इस प्रकार समान नागरिक संहिता का लागू ना होना एक प्रकार से विधि के शासनए संबंध संविधान की प्रस्तावना और मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है।

भारत में महिलाओं की स्थिति पर कमेटी की रिपोर्ट ने 1974 में समान नागरिक संहिता की आवश्यकता की सिफारिश की थी और इससे पहलेए 1971 में पुणे में मुस्लिम महिला सम्मेलन में भी समान नागरिक संहिता की आवश्यकता को उठाया गया था।[1] इसी दौरान 1975-85 अंतर्राष्ट्रीय महिला दशकद्ध के दौरान अनेक महिला संगठन भी अस्तित्व में आए। महिलाओं के अनुभवों ने स्पष्ट किया कि संपत्ति के अधिकारोंए उत्तराधिकार से संबंधित अधिकार और मायके की संपत्ति पर अधिकारों के अभाव ने महिलाओं की स्थिति बेहद कमजोर कर दी है और यह उत्पीड़न और असमानता सारे समुदायों में समान रूप से व्याप्त थी। नारीवादी आंदोलन के भीतर अपने संघर्षों को मजबूती देने के साथ.साथ इस बात पर भी गौर किया गया कि ऐसे कानूनी सुधारों की भी मांग उठाई जाए जो महिलाओं को लाभ पहुंचाएं। इस जरूरत पर भी इस दौरान बल दिया गया की महिला अधिकारों को अल्पसंख्यक.बहुसंख्यक के नजरिए से नहीं बल्कि महिलाओं की समानता के अधिकार और न्याय के दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए।

महिला आंदोलन और बुद्धिजीवी समुदाय के भीतर चलने वाली बहसों को 1980 के दशक के बाद एक नई दिशा मिली। इसमें आए बदलाव के कई कारण देखे जा सकते हैंए जैसे एक

[1] Haksar, Nandita, Campaign for a Uniform Code, in A.R. Desai (Ed.), *Women's Liberation and Politics of Religions Personal Laws in India*, Bombay: C.G. Shah Memorial Trust, 1990.

महत्वपूर्ण कारण संप्रदायिक और कट्टरवादी ताकतों का उभार था जिसके फलस्वरूप अल्पसंख्यक समुदायों में असुरक्षा की भावना बढ़ी है। दूसराए भारत में कानूनी सुधारों के सिलसिले में महिलाओं के अनुभव भी बहुत संतोषजनक नहीं रहे। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय दबाव के चलते राज्य ने महिलाओं के पक्ष में कई कानून तो बनाए लेकिन महिलाओं के प्रति हिंसा और अपराधों को रोकने में इन कानूनों की विफलता ने सामाजिक सुधारों के मुद्दे पर पुनर्विचार की प्रक्रिया को दोबारा हवा दे दी।[2] देखा जाए तो 1980 के दशक और उसके पश्चात ज्यादातर कानून दहेज उत्पीड़नए दहेज हत्याए बलात्कारए भ्रूणहत्या जैसे मुद्दों पर केंद्रित थे। तीसराए राज्य के साथ महिला आंदोलन के अनुभवों ने भी इस बात को समझ लिया कि उनकी स्थिति सुधारने के लिए संघर्ष में राज्य उनका सहयोगी नहीं हो सकता है।

उपरोक्त कारणों के चलते ही महिला आंदोलन ने कानूनी सुधारों के लिए राज्य से प्रार्थना करने के बजाए अपनी समझ पर नए सिरे से विचार करना प्रारंभ कर दिया और इस बात पर जोर दिया जाने लगा की रणनीति के स्तर परए समान कानूनों की मांग को फिलहाल स्थगित कर दिया जाए और इसके बजाय जेंडर समानता के लिए दूसरे विकल्पों; अनिवार्य समान संहिताद्ध पर विचार किया जाए। इन्हीं विकल्पों के संदर्भ में हमें पांच दृष्टिकोण दिखाई देते हैं और इन्हें ही अनिवार्य समान संहिता के रूप में देखने की कोशिश की गईए जो इस प्रकार है.

१ आंतरिक सुधार

२ लैंगिक न्याय पर आधारित वैकल्पिक कोड

---

[2] Agnes, Flevia, *State, Gender and Rhetoric of Law Reform*, Bombay: Research Centre for Women Studies, pp. 1-6, 1995.

३ **विपरीत विकल्प**

४ **निजी कानूनों के दायरे से बाहर के क्षेत्र में कानून निर्माण**

५ **जिन मामलों में सभी समुदायों की महिलाएं एक जैसा भेदभाव झेलती है लेकिन उनके पास समान अधिकार नहीं है वहां अनिवार्य समान कानूनों का निर्माण किया जाए।**

समान नागरिक संहिता: वर्तमान स्थिति

हमारे देश में धार्मिक विभिनता के चलते अलग.अलग कानून दिखाई देते हैं जैसे हिंदू मैरिज एक्ट 1955 हिंदू सकसेशन एक्ट 1956 और क्रिश्चियन मैरिज एक्टए इत्यादि। इन सभी कानूनों में संसद ने लगातार सुधार की है ताकि जेंडर जस्टिस का उद्देश्य पूरा हो सके। जहां तक मुस्लिम पर्सनल लॉ का प्रश्न हैए तो देश के मुस्लिम समाज में शरीयत एप्लीकेशन एक्ट 1937 जोकि अंग्रेज सरकार के जमाने का कानून लागू है इसमें 2017 से पहले आज तक कोई बड़ा संशोधन नहीं हुआ था। मुस्लिम समाज में तलाक से संबंधित मुद्दों पर परंपरागत व्यवहार के रूप में श्तलाक-ए-सुन्नतश् का प्रयोग किया जाता है और तलाक-उल-सुन्नत को दो भागों में बांट कर समझा जा सकता है। इसका पहला भाग श्तलाक-के-अहसान है। इसे मुस्लिम समाज में एक अच्छी प्रक्रिया माना जाती है इसमें पति अपने पत्नी को एक बार तलाक कहने के पश्चात 3 माह की अवधि तक इंतजार करता है और इस बीच दोनों पक्षों से यह उम्मीद की जाती है कि वे सुलह.समझौते के माध्यम से इस विच्छेद को रोका सके। तलाक की सुन्नत के तहत दूसरी प्रक्रिया श्तलाक.ए.हसनश् की होती है। इसमें भी पति अपनी पत्नी को तीन तलाक तो बोलता है परंतु एकदम जोश में या गुस्से के भाव में नहीं बल्कि तीन महीने की समय.सीमा के भीतर वह पहले माह में पहला तलाक बोलता हैए दूसरे

माह में दूसरा तलाक बोलता है और तीसरे माह मेंए तीसरा तलाक बोलता है। इस तीन महीने के समय में भी इनके बीच सुलह और समझाते की गुंजाइश होती है। जहां तक श्तलाक.ए.बिद्दतश् ;तीन तलाकध्तत्काल तलाक और तलाक.ए.मुघलाजाह के रूप में भी जाना चाहता हैद्ध का प्रश्न है इसे नवाचार भी कहा जाता है और इसे बहुत बाद में तलाक की पद्धति के रूप में शामिल किया गया है और इसमें पति अपनी पत्नी को जोशए आवेश या सोची समझी रणनीति के तहत प्रत्यक्ष रूप से अथवा अप्रत्यक्ष साधनों के माध्यम से जैसे व्हाट्सएपए एसएमएसए फोन परए चिट्ठी या ईमेल के माध्यम से तीन बार श्तलाक.तलाक.तलाकश् बोल देता है और इसके पश्चात दोनों का संबंध विच्छेद मान लिया जाता है।

समान नागरिक संहिता के क्रियान्वयन के संदर्भ में यहां पर एक विचारणीय प्रश्न उभरता है कि क्या राज्य को निजी कानूनों में हस्तक्षेप करना चाहिए या नहीं इस संदर्भ में जे एस मिल का मानना था कि व्यक्ति के दो प्रकार के कार्य होते हैं। पहलाए स्वयं से संबंधित और दूसरा, अन्य से संबंधित जब कभी भी हमारे व्यवहार का प्रभाव दूसरों पर नहीं पड़ता तब राज्य के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं होती परंतु जब हमारे किसी व्यवहार का प्रभाव दूसरों पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है तो राज्य का हस्तक्षेप आवश्यक हो जाता है।[3] इसी संदर्भ में सिमोन द बोआर ने अपने श्निजी बनाम सार्वजनिक सिद्धांत; के संदर्भ में कहा था कि ष्जब किसी बात को या व्यवहार को निजता से जोड़ा जाता है और उसे सार्वजनिक वाद.विवाद से बाहर रखा जाता है तब यह राज्य की जिम्मेदारी होती है कि वह देखें कि कहीं निजता की आड़ में किसी का शोषण तो नहीं हो रहा। इसी के साथ सीमोन ने सेक्स और जेंडर में अंतर स्पष्ट करते हुए कहा था कि सेक्स एक जीववैज्ञानिक अंतर को प्रकट करता है जबकि जेंडर शब्द में स्त्री के साथ केवल स्त्री होने के नाते जब उसका सामाजिकए सांस्कृतिकए आर्थिक और

[3] भारद्वाज ऋतेश, *राजनितिक सिद्धांत का परिचय*, आईएसबीएन 978-93-5426-591-4, विराट बुक हाउस, 2021

राजनीतिक शोषण होता है तब शोषण के संदर्भ में जेंडर शब्दावली का इस्तेमाल किया जाता है। यहां पर सेक्स और जेंडर वाद.विवाद की बात करने का उद्देश्य केवल इतना है कि हम तीन तलाक की पद्धति का विश्लेषण लैंगिक न्याय के संदर्भ में भी कर सकते हैं।

तीन तलाक का मुद्दा सर्वप्रथम मोहम्मद अहमद खान बनाम शाहबानो बेगम केस[4] में शीर्ष अदालत ने शाह बानो बेगम को निर्वाह व्यय के समतुल्य आर्थिक मदद देने का फैसला दिया। इस फैसले को रूढ़िवादी वर्ग द्वारा उनकी संस्कृति और विधानो में हस्तक्षेप माना गया। न्यायालय ने अपराध दंड संहिता की धारा 125 के अंतर्गत यह निर्णय लियाए जो हर व्यक्ति पर लागू होता है चाहे वह किसी भी धर्मए जाति और संप्रदाय का हो और न्यायालय ने निर्देश दिया कि शाहबानो को निर्वाह व्यय के समान जीविका दी जाए। इसके पश्चात कांग्रेस सरकार द्वारा 1986 में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को निरस्त कर दिया गया और मुस्लिम महिला अधिनियम.1986 पारित कर दिया गया। इस कानून के अनुसारए ष्हर वह आवेदन जो किसी तलाकशुदा महिला के द्वारा अपराध दंड संहिता 1973 की धारा 125 के अंतर्गत किसी न्यायालय में इस कानून के लागू होते समय विचाराधीन हैए अब वह इस कानून के अंतर्गत निपटाया जाएगा चाहे उपयुक्त कानून में जो भी लिखा हो।[5]

सरला मुदगल वाद ;1995द्ध भी इस संबंध में काफी चर्चित है। यह वाद बहुविवाह के मामलों और इससे संबंधित कानूनों के बीच विवाद से जुड़ा हुआ था। प्रायः यह तर्क दिया जाता है कि

[4] *Mohd. Ahmed Khan vs. Shah Bano Begum and Ors* on 23 April, 1985; Equivalen Citations: 1985 AIR 945, SCR (3) 845

[5] *The Muslims Women (Protection of Rights on Divorce) Act 1986*, Act No. 25 of 1986.

तीन तलाक और बहुविवाह जैसी प्रथाएं महिला के सम्मान और उसके गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।[6]

शबनम हाशमी की याचिका पर फैसला देते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने 19 फरवरी 2014 में यह स्पष्ट कर दिया है कि ष्व्यक्तिगत विश्वास और मान्यताओं का पूरा सम्मान होना चाहिए परंतु यह मान्यताएं नागरिकों को किसी अधिकार के लिए योग्य बनाने वाले प्रावधानों को बाधित नहीं कर सकती।[7] इसी निर्णय के पश्चात सर्वोच्च न्यायालय ने मुस्लिम महिलाओं को बच्चा गोद लेने का अधिकार दिया और साथ ही तलाकशुदा मुस्लिम महिला को अपने पति से गुजारा भत्ता देने का भी आदेश दिया। आज विश्व के 19 से 20 देशों में तीन तलाक को गैर इस्लामी घोषित कर दिया गया है जिसमें पाकिस्तानए बांग्लादेशए टर्कीए साइप्रस इंडोनेशिया अल्जीरिया श्रीलंका जॉर्डन यूएई कतर, सूडान, मोरोको, इजिप्ट, इरान, ब्रूनेई व मलेशिया है। जब अधिकतर मुस्लिम राष्ट्रों ने इसे गैर इस्लामी घोषित किया है तो भारत के मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड, दारुल उलूम व अन्य मुस्लिम संगठनों को भी मुस्लिम महिलाओं को बराबर का अधिकार व सम्मान देना चाहिए।[8]

वर्ष 2016 में विधि और न्याय मंत्रालय द्वारा समान नागरिक संहिता से संबंधित मुद्दों के व्यापक अध्ययन के लिए एक विधि आयोग का भी गठन किया गया था। इस अध्ययन में विधि आयोग का कहना था कि समान नागरिक संहिता का मुद्दा मौलिक अधिकारों के तहत अनुच्छेद 14 और 25 के बीच द्वंद से प्रभावित है। विधि आयोग ने भारतीय बहुल संस्कृति के साथ.- महिला अधिकारों की सर्वोच्चता के मुद्दे को भी महत्व दिया। विधि आयोग का

---

[6] *Smt. Sarla Mudgal , President,...vs. Union of India & Ors* on 10 May 1995, Equivalent citations: 1995 AIR 1531,1995 SCC (3) 635.

[7] *M/S Shabnam Hashmi vs Union of India & Ors* in 19 February, 2014.

[8] Women's Human Rights as their Fundamental Rights, *The Hindustan Times*, 12.01.2021.

मानना था कि समाज में असमानता की स्थिति उत्पन्न करने वाली समस्त रूढ़ियों की समीक्षा की जानी चाहिए और सभी निजी कानूनी प्रक्रियाओं को संहिताबद्ध करने की आवश्यकता है जिससे इनसे संबंधित पूर्वाग्रहों और रूढ़िवादिता का सामना किया जा सके।[9] शाहबानो मामले में अदालत ने खेद व्यक्त किया कि अनुच्छेद 44 एक ष्मृत पत्रष् बना रहा। संभावना है कि आगे भी ऐसा ही बना रह सकता है। अगस्त 2017 में सर्वोच्च न्यायालय में तीन तलाक के बहुत से मामले सामने आने के बाद भाजपा सरकार ने इस पर एक बिल तैयार किया और 28 दिसंबर 2017 को लोक सभा में मुस्लिम महिला विवाह अधिकार संरक्षण विधेयकद्द2017 को पारित कर दिया।[10] इस विधेयक में तीन तलाक को लिखित रूप में या इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों के रूप में जैसे ईमेल एसएमएस और व्हाट्सएप को अवैध और शून्य घोषित कर दिया गया है और इसमें तीन साल तक जेल का प्रावधान भी किया गया है।

सितंबर 2018 में अपने परामर्श पत्र मेंए विधि आयोग ने धर्मों के भीतर भेदभाव को समाप्त करने के तरीके के रूप में समान नागरिक संहिता पर व्यक्तिगत कानूनों के संहिताकरण को चुना। विभिन्न प्रथाओं और रीति.रिवाजों का संहिताकरण उन्हें संविधान के अनुच्छेद 13 के तहत श्कानूनश् बना देगा। अनुच्छेद 13 के तहत आने वाला कोई भी श्कानूनश् मौलिक अधिकारों के अनुरूप होना चाहिएए विधि आयोग ने तर्क दिया है। यह धर्मों की बहुलता की भी रक्षा करेगाए और निकट भविष्य के लिए आगे बढ़ने का मार्ग हो सकता है। वास्तव मेंए विधि आयोग ने अनिश्चित शब्दों में सुझाव दिया है कि यूसीसी ष्देश में इस स्तर पर न तो

---

[9] *Consultation Paper on Reform of Family Law*, Law Commission of India, Government of India, 31 August 2018.

[10] *The Muslim Women (Protection of Rights on Marriage) Bill 2017*, Ministry of Law and Justice, Government of India, 28 December 2017.

आवश्यक है और न ही वांछनीय है।ष् इसने कहा कि एक एकीकृत राष्ट्र को ष्एकरूपताष् की आवश्यकता नहीं है।[11]

अभी हाल ही में दिल्ली उच्च न्यायालय ने देश में समान नागरिक संहिता लागू करने की आवश्यकता बताते हुए कहा था कि इसे लागू करने का अब सही वक्त आ गया है। जस्टिस प्रतिभा एम सिंह की पीठ राजस्थान की मीणा जनजाति की महिला और उसके हिंदू पति के तलाक से संबंधित केस की सुनवाई कर रही थी। इस दौरान उच्च न्यायालय का कहना था कि भारतीय समाज में धर्म जाति और विवाह आदि की पारंपरिक बेड़ियां आज टूट रही है और नीति निर्देशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 44 में जिस समान नागरिक संहिता की बात कही गई है उसे आज हकीकत में बदलना चाहिए। आज युवाओं को अलग.अलग निजी कानून के चलते शादी और तलाक के मामलों में संघर्ष का सामना करना पड़ रहा है और यह सही वक्त है कि समान नागरिक संहिता को लागू किया जाए। देश के युवाओं को शादी तलाक और उत्तराधिकार आदि से संबंधित मामलों में कानूनी अड़चनों से बचाने के लिए समान नागरिक संहिता का होना आवश्यक है। अपने दिशानिर्देशों में उच्च न्यायालय ने विधि और न्याय मंत्रालय के सचिव को इस पर आवश्यक कार्यवाही हेतु निर्देश दिया है।[12]

इन दोनों का विवाह 24 जून 2012 को राजस्थान में हुआ था पति ने 2 दिसंबर 2015 को परिवार अदालत में तलाक की याचिका दायर करी। महिला का पति हिंदू विवाह कानून के मुताबिक तलाक चाहता था लेकिन महिला का कहना था कि वह राजस्थान की मीणा समुदाय से ताल्लुक रखती हैए इसलिए उस पर हिंदू मैरिज एक्ट लागू नहीं होता। इसके

---

[11] Krishnadas Rajgopalan, What is the debate on uniform civil code all about? *The Hindu*, 08 SEPTEMBER 2018 19:31 IST, UPDATED: 09 SEPTEMBER 2018 16:34 IST, access on 02 August 2021. https://www.thehindu.com/news/national/what-is-debate-on-uniform-civil-code-all-about/article24903560.ece

[12] *Satprakash Meena vs Alka Meena* on 07 July 2021

पश्चात फैमिली कोर्ट ने 1955 के हिंदू मैरिज एक्ट का हवाला देते हुए याचिका को खारिज कर दिया जिसके उपरांत महिला के पति ने फैमिली कोर्ट के निर्णय को 28 नवंबर 2020 को दिल्ली उच्च न्यायालय में चुनौती दी और इसे उच्च न्यायालय ने स्वीकार कर लिया।

इस जोड़े की शादी 24 जूनए 2012 को हुई थी। पति ने 2 दिसंबरए 2015 को परिवार अदालत में तलाक की याचिका दायर की।[13] महिला का पति हिंदू विवाह कानून के मुताबिक तलाक चाहता था। लेकिन महिला का कहना है कि वह मीणा समुदाय से ताल्लुक रखती हैए इसलिए उस पर हिंदू मैरिज एक्ट लागू नहीं होता। बाद में फैमिली कोर्ट ने हिंदू मैरिज एक्ट.1955 का हवाला देते हुए याचिका को खारिज कर दिया। फैसले में कहा गया कि महिला राजस्थान की अधिसूचित जनजाति से हैए इसलिए उस पर हिंदू विवाह कानून लागू नहीं होता। महिला के पति ने फैमिली कोर्ट के फैसले को 28 नवंबरए 2020 को हाईकोर्ट में चुनौती दी। इस मामले में उच्च न्यायालय ने यह दलील दी कि उसके सामने ऐसा कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया गया हैए जिससे पता चले कि मीणा जनजाति समुदाय के ऐसे मामलों के लिए कोई विशेष अदालत है।

समान नागरिक संहिता का समर्थन इस मान्यता के आधार पर भी आज किया जा रहा है ताकि विवाहए तलाकए उत्तराधिकारए संपत्ति इत्यादि अनेक दीवानी मामलों में एक समान कानून या समान नागरिक संहिता के आधार पर किसी भी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों के हनन ना हो और विधि के समक्ष समानता और न्याय की उचित प्रक्रिया का अनुसरण करते हुए निजी कानूनों के दुरुपयोग पर रोक लगाई जा सके चाहे वह व्यक्ति किसी भी धर्मए जातिए भाषाए क्षेत्र और लिंग का क्यों ना हो। यदि समान नागरिक संहिता का विश्लेषण राजनीतिक दृष्टिकोण से भी किया जाए तो तो यह बात स्पष्ट रूप से दिखाई

[13] *Ibid.,*

देती है कि भारतीय जनता पार्टी ने अपने चुनावी घोषणापत्र में राम मंदिरए धारा 370 व समान नागरिक संहिता का भी उल्लेख ;अन्य विषयों के साथद्ध किया था और राम मंदिर विवाद को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सुलझाया जा चुका हैए तो वहीं दूसरी ओर धारा 370 के माध्यम से कश्मीर का विशेष दर्जा समाप्त कर दिया गया है और अब ऐसा प्रतीत होता है की बहुत जल्दी जिस प्रकार संसद द्वारा तीन तलाक को गैरकानूनी घोषित किया गया है ठीक उसी प्रकार इस पर भी विशेषज्ञों की राय लेते हुए बहुत जल्दी एक कानून का भारत में निर्माण किया जा सकता है।

संदर्भ (Refrences)

1. Agnes, Flavia, State, *Gender and Rhetoric of Law Reform*, Bombay: Research Centre for Women's Studies, 1995, pp. 1-6.
2. Ahmad, Imtiaz, Personal Laws Promoting Reform from Within, *Economic and Political Weekly*, 11 November, 1995, pp. 2851-52.
3. Basu, Aparna & Ray, Bharati, *Women's Struggle A History of All India Women's Conference 1917-1990*, Manohar, Delhi, 1990.
4. Bayly, C.A., Returning the British to South Asian History: The Limits of Colonial Hegemony', *South Asia*, Vol. XXVII, No. 2, December, 1994.
5. Bhattacharjee, A.M., *Muslim Law and the Constitution*, Eastern Law House, Calcutta and Delhi, 1994.
6. Caroll, Lucy, Law, Custom and Statutory Social Reform: The Hindu Window Remarriage Act of 1856, In J. Krishnamurthy, *Women in Colonial India*, Delhi: Oxford University Press, 1989, pp. 1-26.
7. Chakrabarty, Dipesh, Modernity and Ethnicity in India: A History for the Present', *Economic and Political Weekly*, 30 December 1995, pp. 3373-80.
8. Forbes, Geraldine, In Pursuits of Justice: Women's Organisations and Legal Reform, *Samya Shakti: A Journal of Women Studies*, I (2), 1984, pp. 39-43.

9. Gothoskar, Sujata, Haksar, Nandita, Shah, Nandita, Maharashtra's Policy for women, *Economic & Political Weekly*. XXIV (48), 1994.

10. Haksar, Nandita, Campaign for a Uniform Code. In A.R. Desai (Ed.), *Women's Liberation and Politics of Religious Personal Laws in India,*. Bombay: C.G. Shah Memorial Trust, 1990.

11. http://164.100.47.4/billstexts/lsbilltexts/asintroduced/2649as.pdf

12. https://indiankanoon.org/

13. *https://www.researchgate.net/publication/335821723_UNDERSTANDING_UNIFORM_CIVIL_CODE_AND_ITS_PROBLEM_IN_IMPLEMENTATION*

14. Jaising, Indira, *The Politics of Personal Law*, The Lawyers Collective, Feb., 6-8, 1986.

15. Jayawardene, Kumari, *Feminism and Nationalism in the Third World*, Delhi: Kali for Women, 1986.

16. Kaviraj, Sudipta, The Imaginary Institution of India, in Partha Chatterjee and Gyanedra Pande (eds.), *Subaltern Studies*, Vol. VII, Oxford University Press, New Delhi, 1992.

17. Kishwar, Madhu, Stimulating Reform: Not forcing it: Uniform Vs Optional Civil Code, *Manushi* (89) July-Aug. 5-14, 1995.

- Civil Codes and Personal Laws, Reversing the Option, *Working Group on Women Rights*, Nov. 18, Paper Mimeo, 1995.

- Codified Hindu Law: Myth and Reality', *Economic and Political Weekly*, 13 August, 1994, pp. 2145-61.

- Bhattacharjee, A.M., *Hindu Law and the Constitution*, Eastern Law House, Calcutta and Delhi, 1994.

18. Kosambi, Meera, Girl brides and socio-economic change-Age of Consent Bill (1891) Controversy, *Economic & Political Weekly*, Aug 3-10, 1991.

19. Lingat, Robert, *The Classical Law of India* (translated by J.Duncan M. Derret), University of California Press, Berkeley, 1973.

20. Manimala, Zameen Kenkar? Jote Onkar?, Women's Participation in Bodhgaya Land Struggle, *Manushi* (14), Jan.-Feb., 2-16, 1983.

21. Mazumdar, V., The Social Reform Movement from Ranade to Nehru, in B.R. Nanda (Ed.), *Indian Women From Purdah to Modernity*, New Delhi: Vikas Publishing House, 1976.

22. Parashar, Archana, *Women and Family Law Reform in India*, Delhi: Sage Publication, 1992.

23. Parasher, Archana, *Women and Family Law Reform in India*, Sage Publications, New Delhi, 1992

24. Sangari, Kum Kum & Vaid Sudesh (Ed.), *Recasting Women: Essays in Colonial History*, Delhi: Kali for Women, 1989.

25. Sarkar, Lotika, Jawaharlal Nehru and Hindu Code Bill, in B.R. Nanda (Ed.), *Indian Women-From Purdah to Modernity*, New Delhi: Vikas Publishing House, 1976, pp.87-88.

26. Sathe, S.P., Uniform Civil Code: Implications of Supreme Court intervention, *Economic & Political Weekly*, XXX (30), September 2, 1995, pp. 2165-66.

27. Shah, Nandita & Gandhi Nandita, *The Issues at Stake*, Deiti: Kali for Women, 1993.

- The daughters of Aryavrata, In J. Krishnamurthy, *Women in Colonial India*, Delhi: Oxford University Press, 1989.

28. The Uniform Civil Code-old and new challenges before women's movement, in *Saheli* Brochure, Saheli: 1981-95, Sept. 1995, pp.21-25.